Shiva Japa Mala

शिवजपमाला

Document Information

Text title : Shiva Japa Mala

File name : shivajapamAlA.itx

Category : shiva

Location : doc_shiva

Proofread by : Aruna Narayanan

Latest update : Deember 31, 2021

Send corrections to : sanskrit@cheerful.com

This text is prepared by volunteers and is to be used for personal study and research. The file is not to be copied or reposted without permission, for promotion of any website or individuals or for commercial purpose.

Please help to maintain respect for volunteer spirit.

Please note that proofreading is done using Devanagari version and other language/scripts are generated using **sanscript**.

April 29, 2023

sanskritdocuments.org

शिवजपमाला

श्रीगणेशाय नमः ।

श्रीपंचाक्षरी विद्या का ध्यान

तप्तचामीकरप्राख्या पीनोन्नतपयोधरा ॥

चतुर्भुजा त्रिनयना बालेन्दुकृतशेखरा ।
पद्मोत्पलकरा सौम्या वरदाभयपाणिका ॥

सर्वलक्षणसम्पन्ना सर्वाभरणभूषिता ।
सितपद्मासनासीना नीलकुञ्चितमूर्द्धजा ॥

अस्याः पञ्चविधा वर्णाः प्रस्फुरद्रश्मिमण्डलाः ।
पीतः कृष्णस्तथा धूम्रः स्वर्णाभो रक्त एव च ॥

-शिवपुराण, वायुसंहिता, उत्तरार्द्ध, अ० १३, ४०-४३॥

यह तप्त सुवर्ण के समान पीत रंग के पीन और ऊँचे पयोधर वाली, चार भुजा, तीन नेत्रवाले (द्वितीया के) चन्द्र को मस्तक पर धारण करनेवाली, पद्म (कमल) दल हाथ में लिये, मनोहर, वरद और अभय हाथवाली, सर्व लक्षणों से परिपूर्ण सब आभूषण पहने, श्वेत पद्म (कमल) के आसन पर विराजमान, नील कुंचित (घूँघरवाले) केशो से युक्त है । इसके सूर्यमण्डल के समान चमकते हुए पाँच वर्ण हैं । वह पीत (पीला) , कृष्ण (श्याम), धूम्र, स्वर्णाभ (तपे हुए सोने के समान) और रक्त (लाल) वर्ण (मुखारविन्द) वाली है ।

बीज । शक्ति । स्वर । ऋषि । वर्ण । देवता । मुख । छन्द ।
ॐ । प्रणव । पार्वती । उदात्त । वामदेव । श्वेत । परमात्मा । ... । गायत्री ।
न । प्रणव । पार्वती । उदात्त । वामदेव । पीत । इन्द्र । पूर्व । गायत्री ।

मः । प्रणव । पार्वती । उदात्त । वामदेव । कृष्ण । रुद्र । दक्षिण । अनुष्टुप् ।
शि । प्रणव । पार्वती । अनुदात्त । वामदेव । धूम्र । विष्णु । पश्चिम । त्रिष्टुप् ।
वा । प्रणव । पार्वती । उदात्त । वामदेव । स्वर्णाभ । ब्रह्मा । उत्तर । बृहती ।
य । प्रणव । पार्वती । स्वरित । वामदेव । रक्त । स्कन्द । ऊर्ध्व । विराट् ।

बीज, शक्ति, स्वर, ऋषि, वर्ण, देवता, मुख, छन्द ऊपर के कोष्ठक से जान लेना चाहिए । (ओं नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च -यजुर्वेद) रुद्राध्याय में ऐसा पाठ होने से व्याकरण की रीति से ऐसा ही सिद्ध होता है । मूल विद्या शिव और पंचाक्षर इसका सूत्र है । इसका नाम शिव रूप (कल्याणदायक) समझे । भगवान् देवदेव शिवजी ने अपने मुखारविन्द से ऐसा कहा है कि यह मन्त्र मेरा हृदय है ।

भक्त्या पञ्चाक्षरेणैव यः शिवं सकृदर्चयेत् ।
सोपि गच्छेच्छिवस्थानं शिवमन्त्रस्य गौरवात् ॥

सर्वेषामपि पुण्यानां सर्वेषां श्रेयसामपि ।
सर्वेषामपि यज्ञानां जपयज्ञः परः स्मृतः ॥

तत्रादौ जपयज्ञस्य फलं स्वस्त्ययनं महत् ।
शैवं षडक्षरं दिव्यं मन्त्रमाहुर्महर्षयः ॥

देवानां परमो देवो यथा वै त्रिपुरान्तकः ।
मन्त्राणां परमो मन्त्रस्तथा शैवः षडक्षरः ॥

एष पञ्चाक्षरो मन्त्रो जप्तृणां मुक्तिदायकः ।
संसेव्यते मुनिश्रेष्ठैरशेषैः सिद्धिकाङ्क्षिभिः ॥

अस्यैवाक्षरमाहात्म्यं नालं वक्तुं चतुर्मुखः ।
श्रुवत्यो यत्र सिद्धान्तं गताः परमनिवृताः ॥

सर्वज्ञः परिपूर्णश्च सच्चिदानन्दलक्षणः ।
स शिवो यत्र रमते शैवपञ्चाक्षरे शुभे ।
एतेन मन्त्रराजेन सर्वोपनिषदात्मना ।
लेभिरे मुनयः सर्वे परं ब्रह्म निरामयम् ॥

नमस्कारेण जीवत्वं शिवेऽत्र परमात्मनि ।
ऐक्यं गतमतो मन्त्रः परब्रह्ममयो ह्यसौ ॥

भवपाशनिबद्धानां देहिनां हितकाम्यया ।
आहौन्नमः शिवायेति मन्त्रमाद्यं शिवः स्वयम् ॥

किं तस्य बहुभिर्मन्त्रैः किं तीर्थैः किं तपोऽध्वरैः ।
यस्य नमः शिवायेति मन्त्रः हृदयगोचरः ॥

तावद्भ्रमन्ति संसारे दारुणे दुःखसङ्कुले ।
यावन्नोच्चारयन्तीमं मन्त्रं देहभृतः सकृत् ॥

मन्त्राधिराजराजोऽयं सर्ववेदान्तशेखरः ।
सर्वज्ञाननिधानं च सोऽयं चैव षडक्षरः ॥

कैवल्यमार्गदीपोऽयमविद्यासिन्धुवाडवः ।
महापातकदावाग्निः सोऽयं मन्त्रः षडक्षरः ॥

तस्मात्सर्वप्रदो मन्त्रः सोऽयं पञ्चाक्षरः स्मृतः ।
स्त्रीभिःशूद्रैश्च सङ्कीर्णैर्धार्यते मुक्तिकाङ्क्षिभिः ॥

(-स्कन्दपुराण, ब्रह्मोत्तरखण्ड, अध्याय १, १६-२०)

भक्ति से पंचाक्षर युक्त होकर जो इस मन्त्र द्वारा शिवजी का एक बार भी पूजन करता है, वह शिवमन्त्र के गौरव (महत्त्व) से शिव के स्थान (शिवलोक) को जाता है । सब पुण्य और सब कल्याणों के मध्य में और सब यज्ञों के मध्य में जपयज्ञ उत्तम कहा गया है । (यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि-गीता, १०.२५) उनमें पहले जपयज्ञ के बड़ए भारी कल्याणकारक फल को शिवजी के दिव्य षडक्षर (ॐ नमः शिवाय) मन्त्र को महर्षियों ने कहा है । जैसे देवताओं में शिवजी उत्तम देवता हैं वैसे ही मन्त्रों के मध्य में शिवजी का षडक्षर मन्त्र उत्तम है । जपनेवालों को मोक्ष देनेवाला यह पंचाक्षर मन्त्र सिद्धि को चाहनेवाले सब श्रेष्ठ मुनियों से सेवन किया जाता है ।

इस मन्त्र के अक्षरों के माहात्म्य को नहीं कहा जा सकता क्योंकि इसमें अत्यन्त गुप्त श्रुतियाँ (शिवोऽयं परमो देवः शक्तिरेषा तु जीवज्ञा ॐ नमः शिवायेति याजुषमन्त्रोपासको रुद्रत्वं प्राप्नोति कल्याणं प्राप्नोति य एवं वेद । -त्रिपुरतापिन्युपनिषत्) । सिद्धान्त को प्राप्त हुई हैं । शिवजी के जिस उत्तम पंचाक्षर मन्त्र में सच्चिदानन्द लक्षणवाले सर्वज्ञ एवं अखण्ड शिवजी रमण करते हैं । समस्त

उपनिषदात्मक (सर्वव्यापी स भगवान् शिवः-श्वेताश्वेतरोपनिषद् ।
तस्मात् सर्वगतः शिवः -श्रुति । न सन्न चासञ्छिव एक केवलः,
शिवमैद्वतम्, शिवप्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ।) इस मन्त्रराज
से सब मुनियों ने विकाररहित परब्रह्म को पाया है । इसके द्वारा
परमात्मा शिवजी को नमस्कार करने से जीवत्व एकता को प्राप्त हुआ है ।
इस कारण यह मन्त्र परम ब्रह्ममय है । संसार रूपी फाँसी से
बँधे हुए प्राणियों के हित की कामना से आप ही शिवजी ने "ॐ नमः
शिवाय" ऐसा आदि मन्त्र कहा है ।

उसको बहुत से मन्त्रों, तीर्थ, तपस्या और यज्ञों से कहा है, जिसके
हृदय में गोचर "ॐ नमः शिवाय" मन्त्र है । दुःख से संयुक्त
एवं भयानक संसार में तभी तक प्राणी भ्रमण करता है जब तक
वह एक बार मन्त्र का उच्चारण नहीं करता । मन्त्राधिराजों का राजा
यह मन्त्र सब वेदान्तों का मस्तक
(सर्वव्यापी स भगवान् शिवः-श्वेताश्वेतरोपनिषद् ।
तस्मात् सर्वगतः शिवः -श्रुति । न सन्न चासंछिव एक केवलः,
शिवमैद्वतम्, शिवप्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ।) भूत है ।
यह षडक्षर सब ज्ञानों का निधान है । यह मोक्ष-मार्ग का
दीपक अर्थात् मोक्ष-मार्ग को दिखाने वाला है । यह माया (माया-"मा"
लक्ष्मी कर्मभोग के ज्ञान को "या" प्राप्त होता है, अर्थात् जो कर्मभोग
के अनुसार लक्ष्मी को प्राप्त करा के मोहित करती है, इसी से उसे माया
कहते हैं अथवा (मा) लक्ष्मी (या) ज्ञानभोग करने के निमित्त प्राणियों
को प्राप्त होती है इसी कारण "माया" कहते हैं ।

अधर्ममहिपारूढं कालचक्रं तरन्ति ते ।
सत्यादिधर्मयुक्ता ये शिवपूजापराश्च यः ॥ -विद्येश्वर संहिता, अध्याय १७)
समुद्र के लिये वडवानल है । जैसे समुद्र के जल को वड़वानल
शोषण कर लेता है, उसी प्रकार यह माया के असली रूप को दूर करता
है (क्योंकि माया से कुछ नहीं दिखाई पड़ता) । यह षडक्षर
मन्त्र बड़ए पातकों के लिये दावानल (जंगल की अग्नि) है जिस
प्रकार काष्ठ के भार को अग्नि भस्म कर देती है उसी प्रकार इस
मन्त्रराज के जपनेवालों के पाप सहज में ही भस्म हो जाते हैं । इसी
कारण यह षडक्षर मन्त्र सब कुछ देने वाला है । मुक्ति की इच्छा

रखनेवाले शूद्रों, वर्णसंकरों तथा स्त्रियों द्वारा भी यह धारण किया जाता है । अर्थात् स्त्री शूद्रादि भी इस पंचाक्षर (नमः शिवाय) को जपकर परमपद के अधिकारी हो सकते हैं, जिस पद को उच्च वर्णवाले बड़ए-बड़ए कष्ट से अर्थात् तप करके प्राप्त करते हैं, उन्हें प्राप्त कर सकते हैं । (जो सत्यधर्म युक्त शिवजी की पूजा करते हैं वे (प्राणी) अधर्मरूपी महिष पर आरूढ हुए कालचक्र से तर जाते हैं । इसके ऊपर वृषभरूपी धर्म ब्रह्मचर्य का रूप धारण किये स्थित है वह सत्यादि चार पाद युक्त शिवलोक के आगे स्थित हैं । क्षमा शृंग, शम श्रोत्र (कान) वेदरूपी ध्वनि से विभूषित, आस्तिक्य रूपी नेत्र, वेदाक्षरमय विश्वास रूप उदार मन बुद्धि युक्त सबसे श्रेष्ठ वृषभ पूजन, क्रिया, तप, ज्ञान, ध्यान युक्त है ।)

ॐकार और पंचाक्षर का अभेद

प्रो हि प्रकृतिजातस्य संसारस्य महोदधेः ।
नवं नावान्तरमिति प्रणवं वै विदुर्बुधाः ॥

प्रः प्रपञ्चो न नास्ति वो युष्माकं प्रणवं विदुः ।
प्रकर्षेण नयेद्यस्मान्मोक्षं वः प्रणवं विदुः ॥

स्वजापकानां योगीनां स्वमन्त्रपूजकस्य च ।
सर्वकर्मक्षयं कृत्वा दिव्यज्ञानं तु नूतनम् ॥

तमेव मायारहितं नूतनं परिचक्षते ।
प्रकर्षेण महात्मानं नवं शुद्धस्वरूपकम् ॥

नूतनं वै करोतीति प्रणवं तं विदुर्बुधाः ।
प्रणवं द्विविधं प्रोक्तं सूक्ष्मस्थूलविभेदतः ॥

सूक्ष्मेकाक्षरं विद्यात्स्थूलं पञ्चाक्षरं विदुः ।
सूक्ष्ममव्यक्तपञ्चार्णं सुव्यक्तार्णं तथेतरत् ॥

जीवन्मुक्तस्य सूक्ष्मं हि सर्वसारहितस्य हि ।
मन्त्रेणाथानुसन्धानं स्वदेहविलयावधि ॥

स्वदेहे गलिते पूर्णं शिवं प्राप्नोति निश्चयः ।

केवलं मन्त्रजापी तु योगं प्राप्नोति निश्चयः ॥

एतैर्युक्तः सदा शुद्धः सर्वकामादिवर्जितः ।
सदा जपपरः शान्तो जपयोगीति तं विदुः ॥

-विद्येश्वर-संहिता ।

प्रकृति से उत्पन्न हुए संसार-सागर के लिये यह नौका रूप है इसी कारण पण्डित इसको प्रणव कहते हैं । प्र=प्रपंच; ण=नहीं है; व-तुम में; अर्थात् आत्मा में कुछ प्रपंच नहीं है अथवा प्रकृष्टता से जपने वाले को मोक्ष देता है, इस कारण इसे प्रणव कहते हैं । अपने जप करनेवाले योगियों को और अपने मन्त्र का पूजन करनेवालों को सर्व (सब) कर्म क्षय कर दिव्य ज्ञान देने से प्रणव कहलाता है । मायारहित होने से प्रणव को नूतन कहते हैं । यह प्रकर्षता से महात्मा और शुद्ध-स्वरूप कर देता है । नूतन कर देने से ही पण्डैत इसको "प्रणव" कहते हैं ।
स्थूल भेद से प्रणव दो प्रकार का है । एकाक्षर (ॐ) सूक्ष्म और पंचाक्षर (नमः शिवाय) स्थूल है । सूक्ष्मरूप अव्यक्त अर्थात् अप्रकट पंचाक्षर वाला है और स्थूल प्रकट पंचाक्षर युक्त है । (तस्य वाचकः प्रणवः - योगदर्शन । उस ईश्वरका बोधक, (जाननेवाला नाम), ओंकार है । तज्जपस्तदर्थभावनं - प्रणव का जप, प्रणव का अर्थ शिव को चित्त में बार बार लगाना चाहिए ।) जीवन्मुक्त के निमित्त सबका सार सूक्ष्म रूप है, यही उसका हित करनेवाला है । मन्त्र का अनुसन्धान और अपने देहान्त में देह में ही लय करना सूक्ष्म उपासना है । इसी प्रकार उपासना करने से देहान्त में (मरणकाल में) शिव रूप निःसन्देह हो जाता है और केवल मन्त्र जपनेवाला योग को प्राप्त होता है । इन सब बातों से युक्त सदा शुद्ध सब कामनारहित (निष्काम) सदा जप में तत्पर शान्तचित्त जपयोगी कहलाता है ।

शिवजपमाला प्रस्तावना

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अवियोगोऽस्तु मे देव त्वदङ्घ्रियुगलेन वै ।

एष एव वरः शम्भो नान्यं कञ्चिद्वरं वृणे ॥

सम्पूर्ण वेदों तथा वेदान्त का सार और परम तत्त्व शिव ही हैं । "ईशानो ज्योतिरव्ययः, एको हि रुद्रो न द्वितीयः, यो देवानां प्रभवोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः" इत्यादि श्रुतियों से सिद्ध होता है कि एक शिव हीअद्वितीय हैं । अथर्वशीर्ष के प्रथमखण्ड में लिखा है - किसी समय देवताओं ने रुद्र से पूछा कि "आप कौन हैं ?" तब उन्होंने कहा - "एक मात्र मैं ही जगत् की उत्पत्ति और पालन करने वाला हूँ । मुझसे अधिक कोई नहीं है ।"इसी के दूसरे और तीसरे खण्ड में सब देवता शिवजी की विभूति का वर्णन किये हैं । "यो रुद्रो अग्नौ य अप्सु य ओषधीषु यो रुद्रो विश्वाभुवनाविवेश तस्मै रुद्राय नमोऽस्तु ।"अर्थात् जो रुद्र अग्नि, जल, ओषधी और सब संसार में व्याप्त हैं, उनको नमस्कार है । इसी प्रकार रुद्राध्याय में "नमः स्रोतस्याय च" इस मन्त्र में भी सब वस्तु में शिव का सद्भाव कहा है । "य एषोन्तर्हृदय आकाशः" इत्यादि बृहदारण्यक के मन्त्रों में भी यही कहा है । "अथ यदिदमस्मिन्निति" इसमें शिवको सर्वेश लिखा है । "ब्रह्मविष्ण्वग्निशुक्रार्कजलभूमिपुरोगमाः । सुराऽसुराः सम्प्रसूतास्ततः सर्वे महेश्वराः" ब्रह्माण्डपुराण में कहा है कि ब्रह्मा, विष्णु, अग्नि, शुक्र, सूर्य, जल, भूमि आदि सब उन्हीं (शिव) से उत्पन्न हुए हैं । हरिवंश की कैलासयात्रा के प्रसंग में शिवजी ने कहा है- "हे गोविन्द ! जो तुम्हारे नाम हैं, सो मेरे ही हैं", "शिवं प्रस्तुत्य सर्वाणि ह वा एतस्य नामधे- यानि" आश्वलायन के इस मन्त्र में लिखा है कि शिव की स्तुति करके नामकरण करें । स्कन्दपुराण में लिखा है कि कोई ब्रह्मा, कोई विष्णु, कोई सूर्यादि की मूर्ति की उपासना करते हैं, परन्तु "प्रतिपाद्यो महादेवः स्थितः सर्वासु मूर्तिषु" इस प्रमाण से मूर्तियों में महादेव का प्रतिपादन करना चाहिये, वे ही सब में स्थित हैं । कूर्मपुराण में "गोप्ता चैव जगच्छास्ता शक्तः सर्वो महेश्वरः । यज्ञानां फलदो देवो महादेवनियोगतः" आदिवाक्यों से शिव ही को सब यज्ञ का फलदाता लिखा है । महाभारत के वनपर्व की तीर्थयात्रा के प्रसंग में-"ततो गच्छेत्सुवर्णाक्षं त्रिषु लोकेषु

विश्रुतम् । यत्र विष्णुः प्रसादार्थं रुद्रमाराधयत्पुरा ॥ वराँश्च सुबहूँल्लेभे दैवतैरपि दुर्लभान्” अर्थात् फिर सुवर्णाक्ष पर्वत को जाय, जहाँ विष्णु ने शिव की आराधना करके अनेक वर पाये थे, इसी तरह द्रोणपर्व में अश्वत्थामा के लिंगार्चन की कथा है । शान्तिपर्व में भीष्म ने कहा है- “यं विष्णुरिन्द्रः सूर्यश्च तथा लोकपितामहः । स्तुवन्ति विविधैः स्तोत्रैर्देवदेवं महेश्वरम् ॥

तमर्चयन्ति ये शश्वद्दुर्गाण्यतितरन्ति ते” जिनकी ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र और सूर्यस्तुति करते हैं, उन शिवजी का जो पूजन करता है, उसके सब कष्ट दूर हो जाते हैं । फिर अनुशासन पर्व में शिव से ब्रह्मा विष्णु की उत्पत्ति लिखी है । “सोऽसृजद्दक्षिणादङ्गाद्ब्रह्माणं लोकभावनम् । वामपार्श्वात्तथा विष्णुमादौ प्रभुरथासृजत् ॥

अप्रज्ञातं जगत्सर्वं तदा ह्येको महेश्वरः” अर्थात् जब कुछ नहीं था, तब एक मात्र शिव थे, इत्यादि बहुत स्थल में शिव को सर्वेश्वर कहा है । हरिवंश में लिखा है कि श्रीकृष्णजी ने शिव की स्तुति कर के वर पाया है । वाल्मीकि में “रौद्राय वपुषे नमः”, उत्तरकाण्ड में “ते तु रामस्य तच्छ्रुत्वा नमस्कृत्व वृषध्वजम्” ऐसा कहा है और अश्वमेधप्रकरण में रामचन्द्रजी ने शिवाराधन किया है । यथा-“विशेषाद्ब्राह्मणान्सर्वान् पूजयामास चेश्वरम् । यज्ञेन यज्ञहन्तारमश्वमेधेन शङ्करम् ॥ ” और युद्धकाण्ड में-“अत्र पूर्वं महादेवः प्रसादमकरोद्विभुः।” कहकर शिव का पूजन और शिव की सर्वोत्कृष्टता कही है । भागवत के चौथे स्कन्ध में दक्ष के यज्ञ में शिव की क्रोधशान्ति की इच्छावाले देवताओं से ब्रह्मा ने कहा है-“नाहं न यज्ञो न च यूयमन्ये ये देहभाजो मुनयश्च तत्त्वम् । विदुः प्रमाणं बलवीर्ययोर्वा तस्यात्मतन्त्रस्य कथं विधित्सेत् ॥” अर्थात् मैं, विष्णु, तुम, ऋषि और मुनि आदि कोई भी उन शिव की महिमा को नहीं जानते । अष्टम स्कन्ध में-“न ते गिरित्राखिललोकपालविरिञ्चिवैकुण्ठसुरेन्द्रगम्यम् । ज्योतिः परं यत्र रजस्तमश्च सत्त्वं न यद्ब्रह्मनिरस्तभेदम्” कहा है इससे विष्णु ब्रह्मादि की अपेक्षा शिव की उत्कृष्टता का प्रतिपादन होता है । स्कन्दपुराण में “एषां त्रयाणामधिकः शिवः परमकारणम्” इस वाक्य से तीनों देवताओं से अधिक शिव को कहा है । इसी प्रकार

पद्मपुराण में-"यस्यान्तःस्थानि भूतानि यस्मात्सर्वं प्रवर्तते । यदाहुस्तत्परं तत्त्वं स देवः स्यान्महेश्वरः ॥ " इत्यादि वाक्यों द्वारा चारों वेदों ने शिव की ही स्तुति की है । विष्णुपुराण में लिखा है कि-"धिक्तेषां धिक्तेषां धिक्तेषां जन्म धिक्तेषाम् । येषां न वसति हृदये कुमतेर्यदा विमोचको रुद्रः ॥" अर्थात् जिनके हृदय में शिवभक्ति नहीं, उनको धिक्कार है । ऋग्वेद में- "अन्तरिक्षन्ति तं जनो रुद्रं परो मनीषया गृह्णन्ति जिह्वया ससमिति"। पुरुषसूक्त में भी-"उतामृतत्वस्येशान" इस ईशानपद से शिव का ही बोध होता है । इसी प्रकार बौधायनसूत्र में भी "रुद्रो ह्येवैतत्सर्वम्" और आश्वलायन में- "तस्मै शिवाय महते नमः सूक्ष्माक्षरात्मने" इससे शिवकी सर्वोत्कृष्टता कही है । पातंचल का भी-"पुरुषविशेष ईश्वरः", "तस्य वाचकः प्रणवः" यह अंश शिव का ही बोधक है । यही वार्ता वायुसंहिता के सातवें अध्याय में लिखी है । कौमुदीकार ने भी सूत्रों को शिवमूलक जानकर शिवका विषय स्पष्ट किया है । पद्मपुराण के गीतामाहात्म्य में गीता के अठारह अध्याय को नारायण शिव की मूर्ति कहा है । "ईश्वरः सर्वभूतानाम्" और "तमेव शरणं गच्छ" यह वाक्य शिवपरक है । रसेश्वर मुनि ने भी कहा है-"कल्पान्तरे कदाचित्तु दग्ध्वा लोकान्महेश्वरः । सहसैवासृजद्विष्णुं ब्राह्मणं च निजेच्छया ॥" अर्थात् शिव ने सृष्टि के आदि में ब्रह्मा और विष्णु को उत्पन्न किया है । इस तरह सब पुराण और धर्मशास्त्रादि में शिवकी उत्कृष्टता लिखी है । फिर विचार के साथ देखने से हरिहर में कोई भेद नहीं पाया जाता । इससे बुद्धिमान् लोग इनको शास्त्रानुसार एक ही रूप मानते हैं । आगे लिखे प्रमाणों से यह बात और भी स्पष्ट हो जायेगी कि शिवजी की उत्कृष्टता का प्रतिपादन करने में वेद किसी से पीछे नहीं हैं । (वि० वा० पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र , मुरादाबाद, के हरिहरैकभाव वर्णन से)

यजुर्वेद-

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।

दिव्य गन्ध से युक्त, मर्त्यधर्महीन, उभय लोक के फलदाता,

धन-धान्यादि से पुष्टि बढ़ानेवाले, तीन नेत्रवाले शिवदेवका हम पूजन करते हैं । वे शिवजी हमको मृत्यु, अपमृत्यु तथा संसार के मरण से मुक्त करें यानो छुडावें । जैसे पका फल अपनी ग्रन्थि से टूटकर पृथ्वी पर गिरता है इसी प्रकार हम भी जन्म-मरण के बन्धन से चिरमुक्त हो जायें और अभ्युदय तथा निःश्रेयसरूप दोनों फलों से भ्रष्ट न हों ।

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतोतऽइषवे नमः । नमस्ते अस्तु
धन्वने बाहुभ्यामुततेनमः ॥ १६-१ ॥

या ते रुद्र शिवातनूरघोरापापकाशिनी ।
तया नस्तन्वाशन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि या० ॥ १६-२ ॥

हे दुःख दूर करनेवाले, ज्ञान के देनेवाले अथवा पापीजनों को कर्मफल देकर रुलानेवाले रुद्रदेव ! आपको, आपके बाणों को और आपकी दोनों भुजाओं को नमस्कार है, हे रुद्र देव ! आपका क्रोध और बाणधारी हस्त शत्रुओं पर पड़ए और हमको शान्ति हो ॥

१६-१ ॥ कैलास पर्वत पर स्थित होकर प्राणियों के सुख का विस्तार करनेवाले अथवा गिरा अर्थात् वाणी में स्थित होकर सुख का विस्तार करनेवाले, पर्वत पर शयन करनेवाले हे सर्वज्ञ रुद्र ! आपका शान्त और मंगलरूप विषमता रहित होने से पाप-फलको न देकर पुण्य-फल का ही देनेवाला है । उस (शान्तमय) सुख भरे शरीर से हमको आलोकित कीजिए ॥ १६-२ ॥

नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शङ्कराय च
मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ १६-४१ ॥

इस लोक के कल्याणकारी, जिनसे कि सुख होता है अथवा सुखरूप संसाररूप मुक्तिरूप आप शिवजी को नमस्कार है । संसार के सुखदाता पारलौकिक कल्याण के आकर (खान) आपको नमस्कार है और मोक्षसुख करनेवाले आपको नमस्कार है, कल्याणरूप एवं निष्पाप आपको नमस्कार है और भक्तों के अत्यन्त कल्याणकारक तथा उनको निष्पाप करनेवाले हे शिवजी ! आपको नमस्कार है ॥ १६-४१ ॥

अथर्ववेद -

नमस्तेऽस्त्वायते नमो अस्तु परायते नमस्ते रुद्र तिष्ठत
आसीनाय ते नमः ॥ ११-१-२-१५॥

हे रुद्र ! हमारे सन्मुख आते हुए आपको निमित्त नमस्कार है, पराङ्मुख होकर जाते हुए आपको नमस्कार है, जहाँ-कहाँ स्थित और अपने स्थान पर आसीन आपको नमस्कार है ॥ ११-१-२-१५॥

भवशर्वाविदं ब्रूमो रुद्रं पशुपतिश्च यः ॥ ११-३-६-९॥

भव तथा शर्व नामवाले महादेव के उद्देश्य से हम स्तुतिवाक्य कहते हुए रुद्ररूप पशुपति देव की स्तुति करते हैं ॥ ११-३-६-९॥

सहस्राक्षमतिपश्यं पुरस्ताद् रुद्रमस्यन्त बहुधा विपश्चितम् ।
मोपरम जिह्वयेयमानेयम् ॥ १२-२-१७॥

सहस्रों नेत्रवाले सन्मुख से आड़ में दीखनेवाले अनेक प्रकार से (पापों को) गिरानेवाले यानी नाश करनेवाले महा बुद्धिमान, जयशक्ति के साथ चलते हुए रुद्र (दुःखनाशक शिव) से हम उपराम न हों यानी उनको न भूलें अर्थात् उनका निरन्तर चिन्तन करें ॥ १२-२-१७॥

योऽभियातो निलयते त्वां रुद्र निचिकीर्षति ।
पश्चादनुप्रयुङ्क्षेत्तं विद्धस्य पदवीरिव ॥ ११-२-१३॥

जो (दुष्कर्मा) गुप्त रीति से भी शिव की आज्ञा का भंग करता है, शिवदेव उसे दण्ड ही देते हैं । जैसे व्याधे घायल शिकार को रुधिरादि चिन्ह से खोज कर पकड़ लेते हैं ॥ ११-२-१३॥

ऋग्वेद (रुद्रसूक्त) -

उन्मा ममन्द वृषभो मरुत्वान्त्वक्षीयसा वयसा नाधमानम् ।
घृणीव च्छायामरपा अशीया विवासेयं रुद्रस्य सुम्नम् ॥ २.०३३.०६
क्व१ स्य ते रुद्र मृळयाकुर्हस्तो यो अस्ति भेषजो जलाषः ।
अपभर्ता रपसो दैव्यस्याभी नु मा वृषभ चक्षमीथाः ॥ २.०३३.०७
प्र बभ्रवे वृषभाय श्वितीचे महो महीं सुष्टुतिमीरयामि ।

नमस्या कल्मलीकिनं नमोभिर्गृणीमसि त्वेषं रुद्रस्य नाम ॥ २.०३३.०८
स्थिरेभिरङ्गैः पुरुरूप उग्रो बभ्रुः शुक्रेभिः पिपिशे हिरण्यैः ।
ईशानादस्य भुवनस्य भूरेर्न वा उ योषद्रुद्रादसुर्यम् ॥ २.०३३.०९
अर्हन्बिभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निष्कं यजतं विश्वरूपम् ।
अर्हन्निदं दयसे विश्वमभ्वं न वा ओजीयो रुद्र त्वदस्ति ॥ २.०३३.१०
(ऋ० वे० - अष्ट २-७ अ० २ वर्ग ४।)

हे रुद्र ! आपका सुखदायक हाथ कहाँ है, जो हाथ सबको सुखी करनेवाला है, उस हाथ से मेरी रक्षा करो । हे कामनाओं की वर्षा करनेवाले ! देवकृत पापों के विनाशक ! आप मुझ अपराधी के अपराध शीघ्र क्षमा करें । विश्व के भर्ता, वभ्रुवर्ण कामनाओं के बरसानेवाले, शीघ्रकारी, पूजित, इस गुणविशिष्ट रुद्र के निमित्त मैं सुन्दर स्तुति का उच्चारण करता हूँ । हे स्तुति करनेवाले ! प्रज्वलित और प्रकाशित रुद्र को नमस्कार करो अथवा हवि से उनका पूजन करो । हम महादेव का दीप्त नाम संकीर्तन करते हैं । दृढ
अंगों से युक्त आठ मूर्तिरूप आत्मावाले बहुत रूपों से युक्त, तेजस्वी, वभ्रुवर्णवाले, रुद्र, प्रदीप्त, हिरण्मय, रमणीय अलंकारों से दीप्त होनेवाले हे ईश्वर ! इस भूतसमूह के स्वामी ! आप रुद्र से बल पृथक् नहीं होता । हे रुद्र ! आप ही पूजा के योग्य होते हुए धनुष और बाण को धारण करते हैं, बहुत प्रकार के पूजनीय रूपों से युक्त निष्क अर्थात् हार को धारण करते तथा पूजित होते हुए इस समस्त विश्व को रक्षित रखते हो । हे रुद्र ! आपसे अधिक बलवान् इस जगत् में कोई नहीं है, इस कारण आप ही इस पूजा के व्यापार से युक्त होने योग्य हैं ।

सामवेद-

आवोराजामध्वरस्य रुद्रम् ॥

कौषातकीब्राह्मण-

रुद्रो वै ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च देवानाम् ॥ २५-१३॥

जैमिनि ब्राह्मण-

ततो देवा रुद्रं नापश्यन् । ते देवा रुद्रं ध्यायन्ति । ते
देवा ऊर्ध्वं बहवः स्तुन्वन्ति । यो वै रुद्रः स भगवानित्यादि ।

शतपथब्राह्मण-

शर्व एतान्यष्टौ (रुद्रः, सर्वः, शर्वः, उग्रः, पशुपतिः,
उग्रः, अशनिः, भवः, महान्देवः) अग्निरूपाणि ॥ १६-१-३-१८॥

श्रीकुलार्णवतन्त्र-

अस्ति देवि परं ब्रह्मस्वरूपी निष्कलः शिवः ।
सर्वज्ञः सर्वकर्ता च सर्वेशो निर्मलोऽद्वयः ॥ ७॥

स्वयं ज्योतिरनाद्यन्तो निर्वैरः परात्परः ।
निर्गुणः सच्चिदानन्दस्तथा वै जीवसंज्ञकः ॥ ८॥

तैत्तिरीयकारण्य-

ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमो नमः ।
भवे भवेनाति भवेभवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥ १॥

वामदेवाय नमोज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः
कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमः ॥ २॥

बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो
मनोन्मनाय नमः ॥ ३॥

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः ।
सर्वेभ्यः शर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥ ४॥

तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ५॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम् ।
ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् ॥ ६॥

बुद्धिमान पुरुष के ज्ञान उत्पन्न करनेवाले महादेव के पंचमुखों के मध्य में पश्चिम मुख के प्रतिपादक मन्त्र का अर्थ कहते हैं- मैं तो सद्योजात नामक पश्चिम मुख की शरण को प्राप्त होता हूँ, उस सद्योजात मुख को प्रणाम है । पृथ्वी में जन्म लेने के लिए आप मुझको प्रेरणा मत कीजिये । बल्कि जन्म के लंघनरूपी तत्त्वज्ञान की प्रेरणा कीजिए । संसार से उद्धार करनेवाले सद्योजात के निमित्त प्रणाम है ॥ १॥ अब उत्तर मुख प्रतिपादक मन्त्रार्थ कहते हैं - उत्तर मुख वामदेव, ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, रुद्ररूप के निमित्त नमस्कार है । काल, कलविकरण और बलविकरण के निमित्त नमस्कार है ॥ २॥

बल, बलप्रमथन, सर्वभूतदमन, मनोन्मन के निमित्त नमस्कार है, जो महादेव सब के स्वामी हैं, उन के निमित्त नमस्कार है ॥ ३॥

अब दक्षिण वक्त्र के प्रतिपादक मन्त्र का अर्थ कहते हैं - अघोर नामक दक्षिण वक्त्ररूप जो देव हैं, उनके विग्रह अघोर हैं । सात्त्विक होने से पहला विग्रह शान्त है, दूसरा विग्रह घोर अर्थात् राजस होने से उग्र है, तीसरा विग्रह तामस होने से घोरतर है, हे शर्व ! हे परमेश्वर!! आपके यह तीन प्रकार के विग्रह और सब रुद्ररूपों को सब देश काल में नमस्कार है ॥ ४॥ उत्तर मुखवाला तत्पुरुष नामक देव है, उस तत्पुरुष नाम देव को गुरु तथा शास्त्र मुख से जानते हैं और जानकर उन महादेव का ध्यान करते हैं, वह रुद्रदेव हमको ज्ञान-ध्यान के अर्थ में प्रेरणा करें ॥ ५॥

ईशान नामक जो ऊर्ध्वमुख देव हैं, वे वेदशास्त्रादि चौंसठ कला और विद्याओं के नियामक हैं तथा सब प्राणियों के ईश्वर हैं । वेद के पालक हिरण्यगर्भ के अधिपति ब्रह्म परमात्मा हमारे ऊपर अनुग्रह करने के निमित्त शान्त और सदा शिवरूप हों ॥ ६॥

उपनिषदों में शिवजप उल्लेख

श्वेताश्वतरोपनिषद् में कहा है ।
क्षरं प्रधानममृताक्षरं हरः
क्षरात्मानावीशते देव एकः ।
तस्याभिध्यानाद्योजनात्तत्त्वभावाद्

भूयश्चान्ते विश्वमायानिवृत्तिः ॥ १॥

एको हि रुद्रो न द्वितीयाय
तस्थुर्य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः ।
प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सञ्चुकोपान्तकाले
संसृज्य विश्वाभुवनानि गोपाः ॥ २॥

(अध्याय०३)

जाबालोपनिषद् ॥ १५
अथ हैनं ब्रह्मचारिणं ऊचुः किं जप्येनामृतत्वं ब्रूहीति ॥

स होवाच याज्ञवल्क्यः । शतरुद्रियेणेत्येतान्येव ह वा
अमृतस्य नामानि ॥ एतैर्ह वा अमृतो भवतीति
एवमेवैतद्याज्ञवल्क्यः ॥ ३॥

ब्रह्मबिन्दूपनिषद् ॥ १२
निर्विकल्पमनन्तं च हेतुदृष्टान्तवर्जितम् ।
अप्रमेयमनाद्यं च ज्ञात्वा च परमं शिवम् ॥ ९॥

कैवल्योपनिषद् ॥ १३
हृत्पुण्डरीकं विरजं विशुद्धं विचिन्त्य मध्ये विशदं विशोकम् ।
अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तरूपं शिवं प्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ॥ ६॥

तमादिमध्यान्तविहीनमेकं विभुं चिदानन्दमरूपमद्भुतम् ।
उमासहायं परमेश्वरं प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तम् ॥

ध्यात्वामुनिर्गच्छतिभूतयोनिं समस्तसाक्षिं तमसः परस्तात् ॥ ७॥

हंसोपनिषद् ॥ १५
तस्मिन्मनो विलीयते मनसि सङ्कल्पविकल्पे दग्धे
पुण्यपापे सदाशिवः शक्त्यात्मा सर्वत्रावस्थितः स्वयं ज्योतिः
शुद्धो बुद्धो नित्यो निरञ्जनः शान्तः प्रकाशत इति ॥ ३॥

गर्भोपनिषद् ॥ १७
अहो दुःखोदधौ मग्नो न पश्यामि प्रतिक्रियाम् ।
यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं तत्प्रपद्ये महेश्वरम् ॥

अमृतनादोपनिषद् ॥ २२

ओङ्काररथमारुह्य विष्णुं कृत्वाथ सारथिम् ।
ब्रह्मलोकपदान्वेषी रुद्राराधनतत्परः ॥ २॥

अथर्वशिर उपनिषद् ॥ २३
ॐ देवा ह वै स्वर्गं लोकमायँस्ते रुद्रमपृच्छन्को भवानिति ।
सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासं वर्तामि च भविष्यामि च नान्यः
कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति ।
हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः ।
तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः
य ओङ्कारः स प्रणवः यः प्रणवः स सर्वव्यापी यः
सर्वव्यापी सोऽनन्तःयोऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं
तच्छुक्लं यच्छुक्लं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत्परं ब्रह्म यत्परं
ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः
स भगवान् महेश्वरः ॥ ३॥

अथर्वशिखोपनिषद् ॥ २४
देवाश्चेति सन्धत्तां सर्वेभ्यो दुःखभयेभ्यः सन्तारयतीति
तारणात्तारः । सर्वे देवाः संविशन्तीति विष्णुः ।
सर्वाणि बृंहयतीति ब्रह्मा । सर्वेभ्योऽन्तःस्थानेभ्यो ध्येयेभ्यः
प्रदीपवत्प्रकाशयतीति प्रकाशः ॥ १॥ प्रकाशेभ्यः
सदोमित्यन्तःशरीरे विद्युद्वद्योतयतीति मुहुर्मुहुरिति
विद्युद्वत्प्रतीयाद्दिशं दिशं भित्वा सर्वाँल्लोकान्व्याप्नोतीति
व्यापनाद्व्यापीः महादेवः ॥ २॥

बृहज्जाबालोपनिषद् ॥ २७
शिवश्चोर्ध्वमयः शक्तिरूर्ध्वशक्तिमयः शिवः ।
तदित्थं शिवशक्तिभ्यां नाव्याप्तमिह किञ्चन ॥ ९॥

(अध्याय २)

मन्त्रिकोपनिषद् ॥ ३४
कालः प्राणश्च भगवान्मृत्युः शर्वो महेश्वरः ।
उग्रो भवश्च रुद्रश्च ससुरः सासुरस्तथा ॥ १२॥

प्रजापतिर्विराट् चैव पुरुषः सलिलमेव च ।
स्तूयते मन्त्रसंस्तुत्यैरथर्वविदितैर्विभुः ॥ १३॥

शुक्ररहस्योपनिषद् ॥ ३७
अथ महावाक्यानि चत्वारि । यथा ॐ प्रज्ञानं ब्रह्म ॥ १॥

ॐ अहं ब्रह्मास्मि ॥ २॥ ॐ तत्त्वमसि ॥ ३ ॥ ॐ अयमात्मा
ब्रह्म ॥ ४॥ तत्त्वमसीत्यभेदवाचकमिदं ये जपन्ति ते
शिवसायुज्यमुक्तिभाजो भवन्ति ॥

निरालम्बोपनिषद् ॥ ३८
ॐ नमः शिवाय गुरवे सच्चिदानन्दमूर्तये ।
निष्प्रपञ्चाय शान्ताय निरालम्बाय तेजसे ॥

किं ब्रह्म । स होवाच
महदहङ्कारपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशत्वेन
बृहद्रूपेणाण्डकोशेन कर्मज्ञानार्थरूपतया
भासमानमद्वितीयमखिलोपाधिविनिर्मुक्तं
तत्सकलशक्त्युपबृंहितमनाद्यनन्तं शुद्धं शिवं
शान्तं निर्गुणमित्यादिवाच्यमनिर्वाच्यं चैतन्यं ब्रह्म ॥

तेजोबिन्दूपनिषत् ॥ ३९
ॐ तेजोबिन्दुः परं ध्यानं विश्वात्महृदि संस्थितम् ।
आणवं शाम्भवं शान्तं स्थूलं सूक्ष्मं परं च यत् ॥ १॥

नादबिन्दूपनिषत् ॥ ४०
अतीन्द्रियं गुणातीतं मनो लीनं यदा भवेत् ।
अनूपमं शिवं शान्तं योगयुक्तं सदा विशेत् ॥ १८॥

ध्यानबिन्दूपनिषत् ॥ ४
रेचकेन तु विद्यात्मा ललाटस्थं त्रिलोचनम् ।
शुद्धस्फटिकसङ्काशं निष्कलं पापनाशनम् ॥ ३२॥

अब्जपत्रमधः पुष्पमूर्ध्वनालमधोमुखम् ।
कदलीपुष्पसङ्काशं सर्ववेदमयं शिवम् ॥ ३२॥

योगतत्त्वोपनिषत् ॥ ३
बिन्दुरूपं महादेवं व्योमाकारं सदाशिवम् ।
शुद्धस्फटिकसङ्काशं धृतबालेन्दुमौलिनम् ॥ ९९॥

पञ्चवक्त्रयुतं सौम्यं दशबाहुं त्रिलोचनम् ।

सर्वायुधैर्धृताकारं सर्वाभूषणभूषितम् ॥ १००॥

उमार्धदेहवरदं सर्वकारणकारणम् ।
आकाशधारणात्तस्य खेचरत्वं भवेद्ध्रुवम् ॥ १०१॥

जाबाल्युपनिषत् ॥ १०८
अथ हैनं भगवन्तं जाबालिं पैप्पलादिः पप्रच्छ भगवन्मे
ब्रूहि परमतत्त्वरहस्यम् । किं तत्त्वं को जीवः कः पशुः कः
ईशः को मोक्षोपाय इति । स तमुवाच यथा तृणाशिनो
विवेकहीनाः परप्रेष्याः कृष्यादिकर्मसु नियुक्ताः
सकलदुःखसहाः स्वस्वामिवध्यमाना गवादयः पशवः ।
यथा तत्स्वामिन इव सर्वज्ञ ईशः पशुपतिः ।

त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषत् ॥ ४६
ओ३ं त्रिशिखी ब्राह्मण आदित्यलोकं जगाम तं
गत्वोवाच । भगवन् किं देहः किं प्राणः किं कारणं किमात्मा ।
सहोवाच सर्वमिदं शिव एव विजानीहि । किन्तु नित्यः शुद्धो
निरञ्जनो विभुरद्वयः शिव एकः स्वेन भासेदं सर्वं दृष्ट्वा
तप्तायःपिण्डवदेकं भिन्नवदवभासते ।

भस्मजाबालोपनिषत् ॥ ९०
कैलासशिखरावासमोङ्कारस्वरूपिणं महादेवमुमार्धकृतशेखरं
सोमसूर्याग्निनयनमनन्तेन्दुरविप्रभं व्याघ्रचर्माम्बरधरं
मृगहस्तं भस्मोद्धूलितविग्रहं तिर्यक्त्रिपुण्ड्ररेखाविराजमानभालप्रदेशं स्मितसम्पूर्णपञ्चविधपञ्चा
वीरासनारूढमप्रमेयमनाद्यनन्तं
निष्कलं निर्गुणं शान्तं निरञ्जनमनामयम् ।

श्रीजाबालिदर्शनोपनिषत् ॥ ९३
नष्टे पापे विशुद्धं स्याच्चित्तदर्पणमद्भुतम् ।
पुनर्ब्रह्मादिभोगेभ्यो वैराग्यं जायते हृदि ॥ ४६॥

विरक्तस्य तु संसाराज्ज्ञानं कैवल्यसाधनम् ।
तेन पापापहानिः स्याज्ज्ञात्वा देवं सदाशिवम् ॥ ४७॥

पञ्चब्रह्मोपनिषत् ॥ ९३
अथ पैप्पलादो भगवान्भो किमादौ किं जातमिति ।
किं भगव इति । अघोर इति । किं भगव इति । वामदेव

इति । किं वा पुनरिमे भगव इति । तत्पुरुष इति । किं वा
पुनरिमे भगव इति । सर्वेषां दिव्यानां प्रेरयिता ईशान इति ।
ईशानो भूतभव्यस्य सर्वेषां देवयोगिनाम् । कति वर्णाः ।
कति भेदाः । कति शक्तयः । यत्सर्वं तद्गुह्यम् । तस्मै नमो
महादेवाय महारुद्राय प्रोवाच तस्मै भगवान्महेशः ॥

पाशुपतब्रह्मोपनिषत् ॥ ८०

वैश्रवणो ब्रह्मपुत्रो बालखिल्यः स्वयम्भुवं परिपृच्छति
जगतां का विद्या का देवता जाग्रत्तुरीययोरस्य को देवो
यानि तस्य वशानि कालाः कियत्प्रमाणाः कस्याज्ञया
रविचन्द्रग्रहादयो भासन्ते कस्य महिमा गगनस्वरूप एतदहं
श्रोतुमिच्छामि नान्यो जानाति त्वं ब्रूहि ब्रह्मन् ।

स्वयम्भूरुवाच कृत्स्नजगतां मातृका विद्या द्वित्रिवर्णसहिता
द्विवर्णमाता त्रिवर्णसहिता । चतुर्मात्रात्मकोङ्कारो
मम प्राणात्मिका देवता । अहमेव जगत्त्रयस्यैकः पतिः ।
मम वशानि सर्वाणि युगान्यपि । अहो रात्रादयो मत्संवर्धिताः
कालाः । मम रूपा रवेस्तेजश्चन्द्रनक्षत्रग्रहतेजांसि च ।
गगनो मम त्रिशक्तिमायास्वरूपः नान्यो मदस्ति ।

रुद्रहृदयोपनिषत् ॥ ८८

श्रीसर्वदेवात्मको रुद्रः सर्वे देवाः शिवात्मकाः ॥ १॥

श्रीरुद्ररुद्ररुद्रेति यस्तं ब्रूयाद्विचक्षणः ॥ १६॥

कीर्तनात्सर्वदेवस्य सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
धनुस्तारं शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते ।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत् ॥ ३८॥

लक्ष्यं सर्वगतं चैव शरः सर्वगतो मुखः ।
वेद्धा सर्वगतश्चैव शिवलक्ष्यं न संशयः ॥ ३९॥

योगकुण्डल्युपनिषत् ।

तदभ्यासप्रदातारं शिवं मत्वा समाश्रयेत् ॥ १३॥

शरभोपनिषत् ॥ ५२

अथ हैनं पैप्पलादो ब्रह्माणमुवाच भो भगवन्

ब्रह्मविष्णुरुद्राणां मध्ये को वा अधिकतरो ध्येयः स्यात्तत्त्वमेव
नो ब्रूहीति । तस्मै स होवाच पितामहश्च हे पैप्पलाद शृणु
वाक्यमेतत् ।

बहूनि पुण्यानि कृतानि येन तेनैव लभ्यः परमेश्वरोऽसौ ।
यस्याङ्गजोऽहं हरिरिन्द्रमुख्याः मोहान्न जानन्ति सुरेन्द्रमुख्याः ॥ १॥

प्रभुं वरेण्यं पितरं महेशं यो ब्रह्माणं विदधाति तस्मै ।
वेदांश्च सर्वान्प्रहिणोति चाग्र्यं तं वै प्रभुं पितरं देवतानाम् ॥ २॥

ममापि विष्णोर्जनकं देवमीड्यं योऽन्तकाले सर्वलोकान्सञ्जहार ॥ ३॥

स एकः श्रेष्ठश्च सर्वशास्ता स एव वरिष्ठश्च ।
शिव एव सदा ध्येयः सर्वसंसारमोचकः ।
तस्मै महाग्रासाय महेश्वराय नमः ॥ ३१॥

शाण्डिल्योपनिषत् ॥ ६१
अथ कस्मादुच्यते महेश्वर इति । यस्मान् महत ईशः
शब्दध्वन्या चात्मशक्त्या च महत ईशते तस्मादुच्यते
महेश्वर इति ।

पंचाक्षर मन्त्र की महिमा-

त्रिपुरातापिन्युपनिषत् ॥ ८३
शिवोऽयं परमो देवः शक्तिरेषा तु जीवज्ञा ॐ नमः
शिवायेति याजुषमन्त्रोपासको रुद्रत्वं प्राप्नोति । कल्याणं
प्राप्नोति य एवं वेद ।
सर्वव्रतेषु सम्पूज्य देवदेवमुमापतिम् ॥

जपेत्पञ्चाक्षरीं विद्यां विधिनैव द्विजोत्तम ॥ १॥

(लिंगाध्याय ५)

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरों ! सब व्रतों में शिव-पूजन
करके विधि से पंचाक्षरी विद्या का जप करें । तभी व्रत सफल
होता है । ऋषियों ने पूछा कि पंचाक्षरी विद्या कौन है ? उसका क्या
प्रभाव है और जप का क्या विधान है । यह हमारी श्रवण करने

की इच्छा है, आप वर्णन करें । सूतजी बोले - हे मुनीश्वरों ! एक समय पार्वतीजी के प्रति शिवजी ने जैसा कथन किया था, वही हम आपको सुनाते हैं ।

पञ्चाक्षरस्य माहात्म्यं वर्षकोटिशतैरपि ।
न शक्यं कथितुं देवि तस्मात्सङ्क्षेपतः शृणु ॥ १॥

श्रीमहादेवजी कहने लगे - पंचाक्षर मन्त्र के पूरे माहात्म्य को करोड़ओं वर्षों में भी कोई कहने को समर्थ नहीं है, परन्तु संक्षेप से हम सुनाते हैं । प्रलयकाल में स्थावर, जंगम, देव, असुर, नाग इत्यादि नष्ट हो जाते हैं । प्रकृति के रूप में तुम भी लीन हो जाती हो । तब हम एकाएकी रहते हैं, कोई दूसरा अवशिष्ट नहीं रहता । उस समय वेद और शास्त्र हमारी शक्ति द्वारा पालन किये हुए पंचाक्षर मन्त्र में निवास करते हैं । फिर जब हम दो रूप धारण करते हैं तब हमारी प्रकृति ही मायामय शरीर धारणकर नारायणरूप से समुद्र में शयन करती है । उसके नाभिकमल से पंचमुख ब्रह्मा उत्पन्न हो सृष्टि करने की सामर्थ्य के लिए प्रार्थना करते हैं । एक बार ब्रह्माजी की प्रार्थना सुन उनके हित के लिए मैंन्ने पाँच मुखों से पाँच अक्षरों का उच्चारण किया । उन वर्णों को ब्रह्माजी ने पाँच मुखों से ग्रहण किया और वाच्य-वाचक भाव करके परमेश्वर को जाना । पाँच अक्षरों करके त्रैलोक्य पूजित शिव वाच्य है । यह पंचाक्षर मन्त्र शिव का वाचक है । उस मन्त्र को तथा उसकी विधि को जानकर बहुत काल जप कर सिद्धि पाकर के जगत् के हित के अर्थ अपने पुत्रों को भी ब्रह्माजी ने उस पंचाक्षर मन्त्र का उपदेश किया । ब्रह्माजी ने उस मन्त्र को पाकर भगवान् शिवजी को प्रसन्न करने के लिए मेरु पर्वत के मुंजवान् शिखर पर दिव्य हजार वर्ष तक तप किया । उनकी दृढ भक्ति देख भगवान् ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर लोकहित के लिए पंचाक्षर मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति, बीज, षडंगन्यास, दिग्बन्ध और विनियोग का उपदेश किया ।

वे ऋषिगण भी इस तरह मन्त्र का माहात्म्य सुनकर अनुष्ठान करने लगे क्योंकि उसी के प्रभाव से देवता, मनुष्य, असुर, चार वर्णों के धर्मादि, वेद, ऋषि तथा शाश्वत धर्म और यह जगत् स्थित है ।

पंचाक्षर मन्त्र अल्पाक्षर हैं। बहुत अर्थ करके युक्त हैं।
वेद का सार, मुक्ति का देनेवाला, असन्दिग्ध, अनेक सिद्धिदेनेवाला, सुख से उच्चारण करने योग्य, सब कामना देनेवाला, सब विद्याओं का बीज मन्त्र, सब मन्त्रों में आदि मन्त्र, वट-बीज की भाँति बहुत विस्तार युक्त और परमेश्वर का वाक्य पंचाक्षर ही है। उसके आदि में प्रणव लगा देने से वह षडक्षर हो जाता है।

पंचाक्षर मन्त्र तथा षडक्षर मन्त्र में वाच्य वाचक भाव करके शिव स्थित है। शिववाच्य है। और मन्त्र वाचक है यह वाच्य वाचक भाव अनादि सिद्ध है। जिस पुरुष के हृदय में पंचाक्षर मन्त्र विद्यमान है, उसने मानो सब शास्त्र और वेद पढ़ लिया क्योंकि शिव ही ज्ञान है, इतना ही परम पद है, इतनी ही ब्रह्म विद्या है। इस लिए नित्य पंचाक्षर को जपें। पंचाक्षर भगवान् शिवजी का हृदय, गुह्य से भी गुह्य और मोक्ष ज्ञान का सबसे उत्तम साधन है।

न्यास तीन प्रकार का है - उत्पत्ति, स्थिति और संहार, (१) उत्पत्ति न्यास ब्रह्मचारियों को करना चाहिए। (२) स्थिति न्यास गृहस्थ के करने योग्य है। (३) संहार न्यास के एकमात्र संन्यासी अधिकारी हैं।

इस प्रकार गुरु से प्राप्त पंचाक्षर मन्त्र का जप करें। क्योंकि सब यज्ञों में जपयज्ञ उत्तम है और सब यज्ञों में हिंसा होती है, किन्तु जप यज्ञ हिंसा रहित है। इसी से और सब यज्ञ, दान, तप आदि जपयज्ञ के षोडशांश की भी तुलना नहीं कर सकते। जप करने से देवता प्रसन्न होते हैं और भोग तथा मोक्ष देते हैं। यक्ष, राक्षस, पिशाच ग्रहादि भी भयभीत होकर जप करनेवाले से दूर रहते हैं। जप से पुरुष मृत्यु को भी जीत लेता है। यदि इसका निरन्तर जप करें तो अवश्य कल्याण होवै।

न्यास करते समय पहले करन्यास, बाद में देहन्यास, पीछे अंगन्यास करें।

पुरश्चरण के समय मन्त्र के वर्णों से चौगुना लक्ष जप करें। रात्रि के समय भोजन करें। सब प्रकार के नियम से रहें।

आसन बाँध पूर्व मुख या उत्तर मुख बैठ कर एकाग्र चित्त हो मौन भाव से जप करें और आदि अन्त में पंचाक्षर जप पूर्वक प्राणायाम करें । अन्त में १०८ बीज (ॐ) मन्त्र का जप करें ।

(ॐ) हृदयाय नमः (न) शिरसे स्वाहा (मः) शिखायै वषट्
(शि) कवचाय हुँ (वा), नेत्राय वौषट् (य) अस्त्राय फट् ।

जप के प्रभाव को जानकर सदाचार में तत्पर हो निरन्तर जप करें तो अवश्य कल्याण हो । आचारहीन पुरुष का सब साधन निष्फल होता है । परम धर्म और परम तप आचार ही है । आचारयुक्त पुरुष को कहीं भी भय नहीं रहता । सदाचार के पालन करने से पुरुष ऋषि और देवता तक बन जाते हैं । मुख्यतः असत्य का त्याग करें क्योंकि सत्य ब्रह्म है और असत्य ब्रह्म का दूषण है ।

असत्य तथा कठोर वाक्य, पैशुन्य (चुगली) , परस्त्री, पराया धन तथा हिंसा इनको मन वचन कर्म से त्याग देवे ।

दीर्घायु चाहनेवाला पवित्र होकर गंगादि नदियों पर लक्ष पंचाक्षर मन्त्र का जप करें । दूर्वा के अंकुर, तिल और गुडूची (गिलोय) का दश हजार हवन करें । अपमृत्यु निवारण के लिए शनिवार को अश्वत्थ वृक्ष का स्पर्श करें और जप करें ।

व्याधि दूर करने के लिए एकाग्र चित्त हो एक लक्ष जप करें और नित्य आग की समिधा से अष्टोत्तर शत हवन करें ।

उदर रोग के शान्त्यर्थ ५ लक्ष मन्त्र जप करके दश हजार हवन करें । नित्य सूर्य के सम्मुख पवित्र जल को अष्टोत्तर शत बार अभिमन्त्रण करके पान करें ।
ॐ नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय ।

इति ।

Proofread by Aruna Narayanan

pdf was typeset on April 29, 2023

Please send corrections to *sanskrit@cheerful.com*